बच्चों में सीखने की जटिल प्रक्रिया स्व-अनुभवों, साथियों से वार्तालाप, खेलकूद आदि के माध्यम से सतत चलती रहती है। बच्चों के माता-पिता, शिक्षक अथवा अन्य वयस्कों के स्नेहिल व्यवहार तथा अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करने से यह व्यवस्थित रूप लेने लगती है जो बच्चों में आत्मविश्वास, अवलोकन तथा संप्रेषणीयता का विकास करती है। यदि बच्चों को अभिव्यक्ति के समुचित अवसर नहीं मिलते हैं तो उनके व्यक्तित्व पर इसका प्रतिगामी प्रभाव पड़ता है।

बच्चों के लालन-पालन एवं स्कूली शिक्षा की प्रक्रिया में आरंभ से ही बच्चों के मौलिक चिन्तन को हतोत्साहित किया जाता है। बच्चों के लिए अभिव्यक्ति के समुचित अवसर लोकतांत्रिक समाज की भी आवश्यकता है। परिवार, समाज एवं शाला के माध्यम से बच्चे के व्यक्तित्व निर्माण की प्रकिया का निरूपण प्रस्तुत लेख में किया गया है।

संदर्भ

बच्चे का लालन–पालन एवं शिक्षा : एक अलोकतांत्रिक प्रवृत्ति का विकास

❑ बीरेन्द्र सिंह रावत

सर्दियों (23 नवम्बर, 2003) की दोपहर थी। मैं छत पर बैठा कुछ काम कर रहा था। मेरे दोनों बच्चे (उम्र 5 तथा 6½ वर्ष) अपनी एक दोस्त के साथ दौड़ते हुए मेरे पास आए। जब वे मुझसे कुछ दूर थे तभी से उन्होंने कुछ बताना शुरू कर दिया और मेरे पास पहुंचकर उसी बात को जारी रखा। मैं उनकी बातें ध्यान से सुन रहा था, लेकिन मुझे ठीक-ठीक पता नहीं चल पा रहा था कि वे क्या बताना चाह रहे हैं। लेकिन मैंने उन्हें टोकना ठीक नहीं समझा और उनकी बातें सुनता रहा। वे पूरे उत्साह के साथ हाथ-पैर हिलाते हुए किसी घटना को बयान कर रहे थे, जिसे वे अभी-अभी देखकर आए थे। जब वे अपनी बात खत्म कर चुके तो मैंने उनसे कहा कि उन्होंने मुझे जो कुछ बताया है उसे मैं ठीक से समझ नहीं पाया हूं। मेरी बात से उन्हें थोड़ा धक्का-सा लगा और उन्होंने एक-दूसरे की ओर देखा। मैंने फिर कहा कि मैं उनकी बात को समझना चाहता हूं। उन्होंने जैसे ही एक साथ फिर से समझाना शुरू किया तो उनमें से दो, समझाने का जिम्मा स्वत: ही मन्नू (6½ वर्ष) को सौंपते हुए बोले, 'अच्छा, चल तू समझा।' अकेले कंधों पर आई जिम्मेदारी का अहसास करते हुए मन्नू ने अधिक सचेत होकर बताना शुरू किया। अब की बार वह काफी धीमी गति तथा साफ शब्दों में समझाने की कोशिश कर रही थी। जब उसे दिक्कत आती वह अन्नू (3 वर्ष) तथा प्रीति (10 वर्ष) से पूछती, 'अरे ! वो क्या था? इस प्रकार उनसे सलाह लेने के बाद वह उस

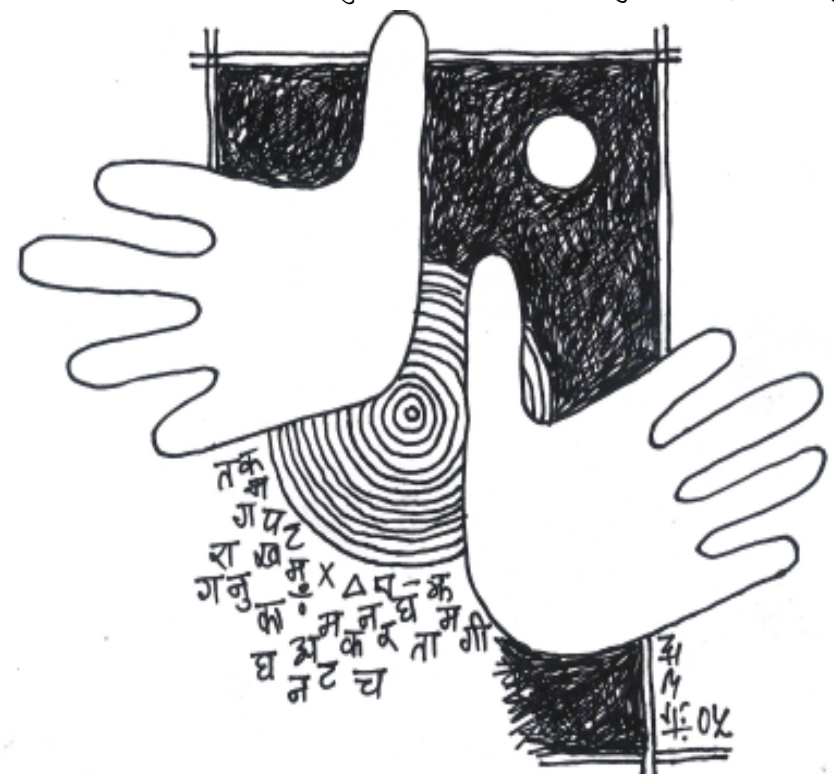

घटना को देखने की मानसिक कोशिश करने के क्रम में अनुभव के लिए सही शब्दों का चुनाव करते हुए स्वयं को तैयार करती और आगे बढ़ती। इस प्रक्रिया में बाकी दो बच्चे उसकी सहायता करते और जहां जरूरत होती अपनी राय यह कहते हुए देते जाते कि नहीं-नहीं ऐसा नहीं, ऐसा था। इसके बाद भी जब पूरी घटना पर मेरी समझ नहीं बन पाई तो मैं उनके साथ अपनी एक-एक जिज्ञासा के साथ संवाद में उतरा। मैं इस प्रक्रिया में वह बताता जाता जो मुझे समझ में आया था और उसमें गलती होने पर वे उसे ठीक करते जाते। जब यह प्रक्रिया पूरी हुई तो उन्होंने मुझसे पूछा - 'अब समझ में आया।' मैंने कहा कि, 'हां, आ गया।' तो वे बोले - 'सुनाओ, क्या समझ में आया।' मेरे द्वारा पूरी बात दोहरा दिए जाने पर वे संतुष्ट हुए और खुशी से मेरी ओर देखने लगे। उनके अनुभव में अपने अनुभव जोड़कर मैंने बातचीत को कुछ देर तक जारी रखा। इसके बाद उन्होंने मुझसे विदा ली।

इस घटना ने मेरी जॉन डिवी के उस विचार को जीवंत रूप से समझने में मदद की जिसके अनुसार प्रत्येक अनुभव 'शैक्षिक अनुभव' नहीं होता। किसी अनुभव को 'शैक्षिक अनुभव' में रूपांतरित करने के लिए किन्हीं प्रक्रियाओं से होकर गुजरना पड़ता है। 'शैक्षिक अनुभव' का एक मानदंड यह है कि वह और अधिक अनुभवों को जुटाने में सहायक हो। डिवी के अनुसार शैक्षिक अनुभवों में निरंतरता होती है। अनुभवों की जटिलता तथा उनको समझने के लिए उदाहरणों में विस्तार की निरंतरता, किसी अनुभव को शैक्षिक-अनुभव की कोटि में रखती है। व्यक्ति को जीवन में अनगिनत अनुभव होते हैं, लेकिन उनमें से वह कुछ को ही 'शैक्षिक अनुभव' में रूपांतरित कर पाता है। डिवी के अनुसार अनुभवों को 'शैक्षिक अनुभवों' में रूपांतरित करने के लिए अनुभवों के बीच जीवंत संबंध (और्गेनिक कनेक्शन) होना आवश्यक है। इस संबंध में पुराने अनुभव की आलोचना तथा नए अनुभव की दिशा तय करना अन्तर्निहित है। लेख के आरंभ में जिस घटना का जिक्र किया गया है उसमें मेरे द्वारा न समझ पाना उनके अनुभव की आलोचना है। मेरे द्वारा प्रस्तुत आलोचना पर उन्होंने नए शब्दों का चुनाव तथा नवीन वाक्यों की रचना के रूप में स्वयं अपनी आलोचना की और अनुभव को नयी दिशा देने का मार्ग प्रशस्त किया।

इस घटना का ज्ञानमीमांसीय विश्लेषण करने पर बच्चों में ज्ञान सृजन की प्रक्रिया को समझने में सहायता मिल सकती है। बच्चों ने किसी घटना को घटते हुए देखा। उसका अवलोकन किया। अवलोकन की प्रक्रिया में उनकी ज्ञानेन्द्रियां अधिक सक्रिय रहीं। इन्द्रियों के माध्यम से उन्होंने घटना के बारे में आंकड़े एकत्रित किये। आंकड़ों का अस्तित्व उनसे बाहर था। आंकड़ों की उनके पूर्वज्ञान, रुचि इत्यादि के रूप में विद्यमान आंतरिक संसार के साथ अन्त:क्रिया के फलस्वरूप वह घटना अनुभव के रूप में उनके मस्तिष्क में दर्ज हुई। बिना किसी मध्यस्थ प्रक्रिया के किसी घटना से मुलाकात को रसेल 'नॉलेज बाई एक्वेन्टेंस' का नाम देते हैं। रसेल के अनुसार हमारा सारा ज्ञान इसी पर आधारित होता है। स्मृति, आत्म-निरीक्षण तथा आत्म-चेतना जैसे आन्तरिक तथा वैयक्तिक उपकरणों का सहारा लेकर घटना से हुई मुलाकात का विवरण तैयार किया जाता है या दिया जाता है। घटना से मुलाकात तथा आन्तरिक उपकरणों की अन्त:क्रिया के आधार पर मस्तिष्क में उकरी तस्वीर को रसेल 'नॉलेज बाई डेस्क्रीप्शन' का नाम देते हैं।

डिवी अनुभव के दो कारक मानते हैं 'वस्तुनिष्ठ स्थितियां' (औब्जेक्टिव कन्डीशन्स) तथा 'आन्तरिक स्थितियां (इन्टरनल कन्डीशन्स) (डिवी, पृ. 39)। वस्तुनिष्ठ स्थितियों का दायरा विस्तृत होता है। व्यक्ति के बाहर जो कुछ घटित होता है वह वस्तुनिष्ठ स्थिति के दायरे में आता है। शिक्षक तथा उसकी गतिविधियां, पाठ्यक्रम, परीक्षा, समाज, खिलौने, खेल, विभिन्न उपकरण आदि मिलकर वस्तुनिष्ठ स्थिति का निर्माण करते हैं। आंतरिक स्थिति में व्यक्ति की बुद्धि, रुचि, पूर्व-ज्ञान आदि शामिल होते हैं। डिवी के अनुसार परंपरागत शिक्षा व्यवस्था में आन्तरिक स्थितियों को नकारा जाता है। उनके अनुसार परंपरागत व्यवस्था में दिक्कत वस्तुनिष्ठ स्थितियों के उपयोग की न होकर उपयोग के तरीकों तथा आन्तरिक स्थितियों को नकारने की थी। ऐसा करने से अन्त:क्रिया की संभावनाएं न्यून हो जाती हैं तथा सीखना आकस्मिक घटना बन जाता है। जब सीखना आकस्मिक घटना बनकर किसी जादू में तब्दील हो जाता है तब आकर्षक होने के बावजूद वह अलगाव का शिकार बन जाता है। वस्तुनिष्ठ स्थितियां सीखने वाले की न होने पर भी आन्तरिक स्थितियों की गतिमयता के कारण सीखने की प्रक्रिया, सीखने वाले को अलगाव का शिकार होने से बचा सकती है।

आज (3 दिसम्बर, 2003) मन्नू को हिन्दी विषय में गृह-कार्य के लिए उसकी दूसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक में से 18 वें पाठ 'मोची और बौने' के अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर याद करने को दिए गए थे। प्रश्न इस प्रकार थे -

1. मोची और उसकी पत्नी कहां रहते थे ?

2. मोची और उसकी पत्नी को कैसे पता चला की जूते कौन बना जाता है ?

3. मोची और उसकी पत्नी ने बौनों के लिए क्या-क्या बनाया ? इन सवालों की श्रेणी में मैंने एक प्रश्न और जोड़ा।

4. मोची और उसकी पत्नी ने बौनों के लिए कपड़े और जूते क्यों बनाए ?

मैंने सभी प्रश्नों को श्यामपट्ट पर लिखा। फिर मन्नू से पूछा कि क्या उसे पाठ की कहानी पता है। उसके हां कहने पर मैंने फिर कहा कि अगर ठीक से याद न हो तो मैं सुनाने को तैयार हूं। उसने इसकी जरूरत नहीं समझी। उत्तर लिखने के क्रम में, आखिरी प्रश्न पर पहुंच कर वह आत्म-विश्वास खोने लगी। वह बोली इस प्रश्न का उत्तर उसे नहीं पता। मैंने कहा कि तुम इसका उत्तर जानती हो। वह इस बात को आसानी से स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थी। मैंने उससे पूछा कि अगर किसी दिन उसे स्कूल में बहुत-सा काम मिल जाए और उसके काम को खत्म करने में उसकी कोई दोस्त मदद कर दे तो उसे कैसा लगेगा ? वह बोली - 'अच्छा लगेगा'। मैंने आगे पूछा कि तुम्हारी सहेली को यह बात कैसे पता चलेगी कि तुम्हें अच्छा लगा। उसने कहा कि वह उसे (दोस्त को) 'धन्यवाद' कहेगी और चीज देगी। मैंने उसकी इस भावना की साम्यता मोची और उसकी पत्नी की भावनाओं के साथ दिखाते हुए चौथे प्रश्न का उत्तर लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। कुछ ही देर में उसने लिखा - 'मोची और उसकी पत्नी को अच्छा लगा था । उन्होंने धन्यवाद देने के लिए कपड़े और जूते बनाए।' मैंने उत्तर पढ़ा और अपनी टिप्पणी दी कि वह इस प्रश्न का कोई और उत्तर भी सोच सकती है। इसके बाद मैंने उससे पूछा कि जहां-जहां पर वर्तनी में अशुद्धि रह गई है क्या मैं उन्हें ठीक कर दूं ? उसके हां कहने पर हमने वर्तनी के संबंध में कुछ बातचीत की और फिर काम बन्द कर दिया।

अगली सुबह स्कूल जाने के लिए उठते ही उसने कहा-

'पापा, मैंने उस सवाल का एक अच्छा-सा उत्तर सोचा है।' मेरे द्वारा सुने जाने की जिज्ञासा को देखते हुए उसने सुनाया कि - 'बौनों ने मोची और उसकी पत्नी के लिए एक पवित्र काम किया था।'

शुरू में दर्ज घटना के बाद मेरे तथा बच्चों के बीच रिश्ते में एक आयाम अधिक सैद्धांतिक समझ के साथ जुड़ गया। बच्चों के साथ बातचीत में कोई बात या बात का कोई हिस्सा समझ न आने पर, मैं उनसे फिर से समझाने के लिए कहता। मैंने पाया कि ऐसा करने पर वे सम्मानित महसूस करते हैं । उनमें यह विश्वास और बढ़ रहा है कि उनके पास कहने के लिए ऐसा कुछ है जिसे दूसरे (वयस्क) सुनना और समझना पसंद करते हैं । अभिव्यक्ति तथा संवाद के अवसर उपलब्ध होने पर एक ओर जहां बच्चों को उन मनोविकारों से बचाया जा सकता है जो अभिव्यक्ति के अवसरों की अनुपलब्धता के कारण पनपते हैं वहीं दूसरी ओर यह लोकतंत्रात्मक सामाजिक व्यवस्था एवं प्रबुद्ध मानवीय समाज के निर्माण के लिए भी अनिवार्य है।

एरिक फ्रॉम ने अपनी पुस्तक 'दि फीयर ऑफ फ्रीड्म' में उन कारकों को समझाया है जिन्होंने अशक्त तथा एकाकी, चिंतित तथा असुरक्षित व्यक्तित्व का विकास किया। उन्होंने दर्शाया कि कैसे जर्मनी की विशिष्ट स्थितियां तानाशाही विचारधारा तथा राजनीति

3 दिसम्बर, 2003 को ही जिस समय मन्नू हिन्दी विषय का काम कर रही थी उसी समय अन्नू मेरे पास बैठा था । आज गृहकार्य के रूप में उसे 'शेर और चूहे' की कहानी याद करके आने को कहा गया था (इससे पहले भी उसे यही कहानी पुस्तक में दिए गए चित्रों के आधार पर लिखने तथा याद करने के लिए दी गई थी।)। पूछने पर उसने बताया कि कहानी उसे याद है। उसने कहानी सुनाई। कहानी सुनकर मैंने उसकी तारीफ करते हुए यह भी कहा कि कहानी सुनाने में कहीं-कहीं गड़बड़ हो गई थी, अगर तुम कहो तो मैं सुधार कर दूं । उसके हां कहने पर उसी की तर्ज पर मैंने कहानी सुनाई । कहानी पूरी कर लेने के बाद जहां-जहां मैंने कुछ जोड़ा था उन-उन हिस्सों को उसके द्वारा सुनाई गई कहानी से तुलना करते हुए उभारा। मैंने उससे कहानी फिर से सुनाने के लिए कहा। यह पूरी प्रक्रिया एक बार और दोहराई गई। जब उसने तीसरी बार कहानी सुनाकर समाप्त की तो उसके चेहरे पर संतोष का भाव था। मेरे यह पूछने पर कि कहानी सुनाना कैसा लगा वह शरमाता हुआ मुस्कुराने लगा।

इस पूरी प्रक्रिया में हमें 20-25 मिनट का समय लगा।

के विकास के लिए उपजाऊ भूमि साबित हुई (1968, पृ.07)। उनका मानना है कि स्वयं को लोकतांत्रिक कहे जाने वाले समाजों में भी वे कारक मौजूद हैं जिनका उपयोग करके इन्हीं कारकों को सुदृढ़ करने के साथ-साथ इन्हें तानाशाही व्यवस्था कायम करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। उनका मानना है कि 'हमारे लोकतांत्रिक समाजों में व्यक्ति शक्तिहीनता तथा महत्त्वहीनता की भावना से त्रस्त है (वही)। परिवार से ही शक्तिहीनता तथा महत्त्वहीनता

को मूल्य के रूप में अपनाने का प्रशिक्षण शुरू हो जाता है। इसकी प्रारंभिक झलक बच्चे की स्वत: स्फूर्त भावनाओं को कुचले जाने की प्रवृत्ति में मिलती है। 'स्वत: स्फूर्त भावना को समाप्त करने या रोकने के लिए शत्रुता (होस्टलिटी) तथा नापसंदगी (डिस्लाइकिंग) के तरीके भी अपनाए जाते हैं।' (वही, पृ.209)। परिवार 'शत्रुता' तथा 'नापसंदगी' को सोचने के कर्म के खिलाफ औजार के रूप में इस्तेमाल करता है। इस प्रकार की सामाजीकरण की प्रक्रिया से निकलकर बच्चा स्कूल पहुंचता है (यदि राज्य ने ऐसी व्यवस्था की है तो)।' शिक्षा की शुरूआत से ही मौलिक चिन्तन को हतोत्साहित किया जाता है तथा बने बनाए विचारों को लोगों के मस्तिष्क में डाला जाता है।' (वही, पृ. 213)। 'मौलिक चिन्तन' से फ्रॉम का आशय यह नहीं है कि कोई विचार पहले कभी किसी के द्वारा नहीं सोचा गया बल्कि वह उस व्यक्ति की अपनी गतिविधि के परिणामस्वरूप उसके मस्तिष्क में उपजता है। इस अर्थ में वह उस व्यक्ति का विचार होता है। परिवार तथा स्कूल में ऐसी अनेक पद्धतियां अपनाई जाती हैं जो मौलिक चिन्तन को हतोत्साहित करती हैं या जिनसे मौलिक चिन्तन हतोत्साहित हो जाता है। उनमें से एक है तथ्यों तथा सूचनाओं के ज्ञान को महत्त्व देना । सूचनाओं तथा तथ्यों में बच्चा शामिल नहीं हो पाता । इस प्रकार की शिक्षा-प्रक्रिया में सीखने वालों की मानवीयता को गिराकर उन्हें वस्तु के रूप में देखा जाता है । ऐसी प्रक्रिया से बच्चों में आत्म-विश्वास बढ़ने की उम्मीद नहीं की जा सकती । पहली कक्षा के बच्चों को दिए जाने वाले प्रश्न पत्रों को देखा जाए तो इस बात की पुष्टि होती है कि मौलिक चिन्तन को हतोत्साहित करने की प्रवृत्ति शिक्षा में गहरे पैठी हुई है। प्रारंभ से ही स्कूल तथ्यात्मक एवं सूचनात्मक शिक्षा को आधार बनाकर बच्चों को 'विवेकीकरण' की प्रक्रिया से जुड़ने के अवसर कम करते हैं। फ्रॉम का मानना है कि ऐसा शैक्षिक वातावरण ऐसे समाज की रचना करता है जिसमें तानाशाही प्रवृत्तियों को पनपने के अवसर आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।

स्कूलों में बच्चों के आत्म-विश्वास के विकास के कुछ अवसर उपलब्ध भी हैं लेकिन साक्षरता कार्यक्रमों के विस्तार ने इन अवसरों को और अधिक सीमित किया है। आज शिक्षा के व्यापक उद्देश्य कागजों पर भी अपनी जगह नहीं बना पा रहे हैं। शिक्षा को साक्षरता के स्तर तक नीचे गिराते रहने के पीछे किसी राष्ट्र के कौनसे तर्क हो सकते हैं ? साक्षरता से वे कौन से व्यापक उद्देश्य पूरे हो रहे हैं जो शिक्षा के द्वारा पूरे नहीं हो सकते ? साक्षरता सभी के लिए है या मात्र 'अन्यों' के लिए ? किसी मौजूदा कार्यक्रम की परिधि को लगातार समेटने का अर्थ यह होना चाहिए कि उसके स्थान पर आया नया कार्यक्रम मौजूदा कि तुलना में गुणात्मक दृष्टि से बेहतर होगा। यह भारतीय संविधान के आदर्शों का बेहतर संवाहक होगा। लेकिन साक्षरता कार्यक्रमों ने तो भारतीय समाज में मौजूद असमानताओं को और भी गहराया है।

शिक्षा के कमजोर स्तर को बेहतर बनाने के स्थान पर साक्षरता को राष्ट्रीय उद्देश्य के रूप में अपना लेना और उससे भी नीचे गिरकर शिक्षक एवं विद्यालय विहीन 'मुक्त शिक्षा प्रणाली' (पाठ्यचर्या की रूपरेखा, पृ.75) को अपनाया जा रहा है। ऐसा करने से बच्चों को औपचारिक स्कूलों के माध्यम से उपलब्ध होने वाले थोड़े बहुत 'शैक्षिक अनुभवों' को भी प्रतिबंधित किया जा रहा है। क्या ऐसा तानाशाही ताकतों को विकसित करने के लिए किया जा रहा है यह एक सवाल है जिसके जवाब की झलक 90 के दशक से किये जा रहे 'संरचनागत प्रावधानों' में पाई जा सकती है । इन प्रावधानों का सीधा असर समाज के विभिन्न समूहों तथा परिवार के सदस्यों में परस्पर होने वाली अन्त:क्रियाओं की गुणवत्ता पर पड़ेगा । ऐसे में स्कूल ही नहीं परिवारों में ऐसे अवसर कम होंगे जिनके द्वारा अनुभवों को'शैक्षिक अनुभवों' में रूपांतरित करके घटनाओं को उनकी समग्रता में समझा जा सके। ◆

संदर्भ सूची

1. डिवी जॉन, एक्सपीरियन्स एन्ड एज्यूकेशन, द मैक्मिलन कंपनी, न्यूयॉर्क, 1948.
2. रसेल बर्ट्रेन्ड. नॉलेज बाई एक्वेन्टैंस एण्ड नॉलेज बाई डेस्क्रिप्शन, द प्रोब्लमस ऑफ फिलॉसफी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, मुंबई, 1994, पृ. 25-32.
3. फ्रॉम एरिक, द फीयर ऑफ फ्रीडम, रूटलेज, लंदन 2001.
4. फ्रेरे पाओलो, उत्पीड़ितों का शिक्षाशास्त्र, ग्रन्थशिल्पी प्रा.लि., नई दिल्ली 1996.
5. विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली 2000.
6. सद्गोपाल अनिल, एजूकेशन फॉर द फ्यू , फ्रंटलाइन, दिसंबर 5, 2003.
7. रावत बीरेन्द्र सिंह एवं अहमद फिरोज, पाठ्यपुस्तक विश्लेषण : कुछ शिक्षणशास्त्रीय तथा सामाजिक पहलू, शिक्षा विमर्श, जयपुर, दिसंबर, 02 जनवरी, 03.
8. रावत बीरेन्द्र सिंह, डायरी (अप्रकाशित) के पन्ने।
9. प्रश्न पत्र कक्षा एक एवं दो, शहीद बसंत कुमार विश्वास, सर्वोदय विद्यालय, सिविल लाईन्स दिल्ली, प्रथम, द्वितीय एवं अन्तिम सत्र, 2002-03 तथा प्रथम एवं द्वितीय सत्र, 2003-04.